International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 187-189

नई कहानी में व्यक्त राजनीतिज्ञों के गिरते आर्थिक मूल्यों का चित्रण

सुमन रानी
चौ0 देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

भारत में प्रजातांन्त्रिक व्यवस्था है। इस राज्य प्रणाली में सत्ता जनता द्वारा चुने गए राजनेताओं के हाथ में होती है, लेकिन विडम्बना यह है कि राजनेता सत्तारूढ़ होते ही सभी आदर्शों को भूल जाते हैं। उनके लिए कुर्सी ही सब कुछ हो जाती है। सत्ता की भूख में ये नेता ईमान को त्याग देते हैं। जनता के विश्वास को खो देते हैं। ये अवसरवादी होकर केवल अपनी ही जेबें भरते हैं। इनकी कथनी और करनी में महान अंतर है। सत्ता इन्हें भ्रष्ट बना देती है। ये चुनावों में झूठे आश्वासन देते हैं। भाशणबाजी और नारेबाजरी का सहारा लेते हैं और चुनाव जीत जाने के बाद जनता का शोषण करते हैं। वर्तमान चुनाव धन, शक्ति और गुंडागर्दी का अखाड़ा बन गया है। चुनाव जीतने के लिए नेता को यदि सफेद झूठ बोलना पड़े तो वह बोलता है। चुनाव जीतकर सत्ता को हथियाना उसका लक्ष्य बन गया है। वास्तविक जीवन में राजनीति आज पूरे समय का पेशा बन गई है। दूसरे पेशेवर लोगों की तरह राजनीति भी अपनी आजीविका और रूतबे को सुरक्षित करते हैं और प्रशासन पर अपना शिकंजा कसते हैं।

भारतीय प्रशासन भी भ्रश्टाचार और घूसखोरी का पिटारा बन गया है। पुलिस निर्मम, अनैतिक और कठोर है। वह अपराधी को छोड़ देती है और निरपराधी को अपराधी बनाकर न्यायालय में पेश कतरी है। भारतीय न्याय अंधा और बहरा है। यह न देखता है और न ही सुनता है। इसमें गवाह भी झूठे हैं, वकील भी झूठ बुलवाते हैं। इस न्याय पद्धति में धन का बोलबाला है। पैसे वाला अपने लिए न्याय खरीदता है। राजनीति, चुनाव पद्धति और प्रशासन व्यवस्था बिल्कुल भ्रष्ट हैं। राजनीति से जुड़े इन्हीं पक्षों पर विचार करना ही प्रस्तुत अध्याय में हमारा मन्तव्य है।

राजनीति शब्द 'राज' तथा 'नीति' दो शब्दों के योग से बना है। प्रायः राज से राज्य तथा नीति से नियम, अर्थ लगाया जाता है। 'नीति' शब्द 'नी' धातु से बना है। 'नी' का अर्थ है कि किसी को, किसी ओर ले जाना अथवामार्ग प्रदर्शन करना राजनीति शब्द अंग्रेजी के 'पॉलिटिक्स' शब्द का पर्याय है। पश्चिम से आया यह शब्द पूर्व के 'राजधर्म' तथा 'राजशास्त्र' का ही पर्यायवाची है। 'पॉलिटिक्स' शब्द यूनानी भाशा शब्द 'पॉलिस' से बना है। जिसका अर्थ है– 'नगर' या 'नगर राज्य' इसका विशेषण है– नागरिक शास्त्र। रूढ़ होते–होते यह शब्द आम बोलचाल की भाशा में भी पॉलिटिक्स या राजनीति ही प्रयुक्त होने लगा है। राजनीति के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने समय–समय पर अपनी परिभाशाएं दी हैं। रामचंद्र वर्मा उन नियमों तथा विधान आदि को राजनीति मानते हैं जिनके अनुसार किसी राज्य का कोई राजा शासन कार्य चलात है। [1] प्रत्येक राजा के कुछ नियम होते हैं, जिनके अनुसार वह अपने राज्य कार्य को चलाता है। राज्य को चलाने की अनेक प्रणालियां होती हैं, जो राज्य के साथ बदलती रहती हैं। प्रत्येक देश का संविधान होता है। अधिकांश संविधान लिखित है जबकि इंग्लैंड का संविधान परंपराओं पर चलता है और वह अलिखित है। यह बनाया नहीं गया है, बल्कि इसका विकास हुआ है। ''यह कोई कागज का टुकड़ा नहीं है और न ही इस संविधान का विकास टूटा है। यह एक विकासमुखी शिशु है जिसका आरंभ कई शताब्दियों पहले हुआ। इस प्रकार ब्रिटिश संविधान विकसित है निर्मित नहीं है, यह गतिमान है, स्थिर नहीं। इसका पिछली तेरह शताब्दियों से विकास निरंतर होता रहा है। वैड और फिलिप्स के शब्दों में ''अंग्रेजों ने अपने राजनीतिक दर्शन को कानून की शब्दावली में कभी घोषित नहीं किया है। ऑग के अनुसार इंग्लैंड में ''राजनीतिक परिवर्तन इतने धीरे–धीरे हुए हैं कि रूढ़ियां तथा परंपराओं के प्रति लोगों की निष्ठा स्वाभाविक रही है और आत्मा के बदल जाने पर भी प्राचीन नामों और रूपों को वास्तविक रूप में कायम रखने की प्रेरणा इतनी प्रबल रही है कि इंग्लैंड संवैधानिक इतिहास इतनी विकासशील तथा निरंतर प्रकृति प्रकट करता है कि इसकी किसी भी अन्य देश से तुलना नहीं की जा सकती।'' [2]

प्रजातंत्र का आर्थिक पहलू राजनीतिक पहलू से कम महत्वपूर्ण नहीं है। आर्थिक प्रजातंत्र के अभाव में राजनीतिक या सामाजिक प्रजातंत्र की स्थापना नहीं हो सकती है। आर्थिक प्रजातंत्र का अर्थ उस आर्थिक व्यवस्था से है जिसमें उत्पादक के समस्त साधनों पर किसी व्यक्ति विशेष या वर्ग विशेष का आधिपत्य न रहकर, समज का सामूहिक आधिपत्य हो, उत्पादन का उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ न होकर सार्वजनिक हित हो तथा एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य का शोषण न हो। इसका अर्थ वस्तुतः पूर्ण आर्थिक अवसर है अर्थात सभी लोगों को भोजन, वस्त्र, शिक्षा आदि की इतनी सुविधाएं रहे कि इनकी प्रगति में किसी प्रकार की आर्थिक बाधा न पड़े।

संक्षेप में ''प्रजातंत्र एक विशेष प्रकार का शासन है, एक सामाजिक व्यवस्था का सिद्धांत है, एक प्रकार की मनोवृत्ति है, एक आर्थिक आदर्श है। इसके अंतर्गत राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था तथा दैनिक व्यवहार के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मापदंड सम्मिलित है।'' [3] इसके अंतर्गत राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था तथा दैनिक व्यवहार के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मापदंड सम्मिलित हैं।'' [4]

प्रजातंत्र में चुनाव पद्धति का बहुत महत्व होता है। मैत्रयी पुष्पा की कहानी 'बहेलिए' की नायिका गिरजा राजनीति में पदार्पण करती है। वह गांव में न्याय करना चाहती है। परस्थितियों से बाध्य होकर वह चुनाव में प्रधान पद के लिए खड़ी होती है। लेखिका के शब्दों में, '' घर कुनबे से उन्हें उम्मीद नहीं थी कि वे प्रधान पद के लिए उनके पक्ष में वोट देंगे। उन्होनें परवाह भी नहीं की ओर धड़ल्ले से जा बैठी शोषित–दलितों के बीच। परिवार ने उपेक्षा की, भर्त्सना की, वह मीरा बनी रही– विष के प्याले पीने की ठानकर।

चुनाव में वह ऐसे जीती थी। एकता की रस्सी में बंधकर दीन, दलित और अति कमजोर भी सुमेरू पर्वत होज जाते हैं।, उन्हें कोई नहीं हिला सकता। उनके सहयोगी सुमेरू पर्वत हो गए और गिरजा उनकी ऊंची से ऊंची चोटी

विरोधियों ने उनके आगन में पत्थर बरसाए, उसे चुनाव के दिनों में डरावनी धमकी मिली, टूटे कांच फैंके गए। वे घायल तो हुई, मगर पराजित नहीं। प्रधान पद पर आसीन होकर ही रहीं। अच्छे–अच्छे दिग्गजों को पटखनी खिल दी। क्या करते, दांत

पीसकर रह गए घातकी? चुनाव पेटियों को जड़वा देने की भी घात लगाई थी, लेकिन उस समय सूरज गांव में ही था। उसी के दहल से हिम्मत नहीं पड़ी थी किसी की।'' [5]

इस कहानी में सारे गांव का इन्साफ करने वाली गिरजा अंत में अपने दरोगा बेटे से हारती है। वह कायर ही नहीं, चरित्रहीन भी निकलता है।

सुधा गोयल की कहानी 'चुनाव' के वातावरण से संबंधित– ''जब भी चुनाव आते, घर में सरगर्मियां तेज हो जाती। बाहर बैठक में महफिलें जमती। राजनैतिक चर्चाएं होती। मैं उन दिनों छोटी थी। ढेरों लोग आते, सफेद खादी के कुर्ते और धोती पहने, गांधी टोपी लगाए। किसी के हाथ में छड़ी होती, किसी के गालों के बीच बीड़े दबे होते, किसी की अंगुलियों में सोने की चमचमाती अंगूठियां और गले में सोने की जंजीर होती। उन सबी वय मेरे पिताजी के समकक्ष या उनसे कुछ अधिक ही होती। पिताजी चुनाव जीतते तो खूब खुशियां मनाई जाती। मिठाई बांटी जाती, बाजे बजते, जुलूस निकलते, दावतें होती। पिता जी फूलों के हारों से लदे खुशी–खुशी घर लौटते। पिताजी जी जीत मेरी जीत बन जाती। सारी अध्यापिकाएं पिताजी को बधाई देने आती। किसी अध्यापिका को पिताजी से कोई काम होता तो वे मुझे अपने पास बुलाकर बड़े प्यार से कहती, ''सुनो! अपने पिता जी से पूछना कब घर पर मिल सकते हैं।। जब अध्यापिकाएं मुझये प्यार से बोलती तो मेरी अन्य सहपाठिनें जल कर कहती, '' नेता की बेटी है।'' उनके व्यंग्य को मैं समझती, लेकिन चुप रहती।'' [6]

राजनीति यदि प्रभाव को बढ़ाती है तो सहनशील भी बनाती है।

भारतीय राजनीति में राजनेता कम हैं जबकि अभिनेता ज्यादा हैं। इन्हें बस एक ही भूख हैं–सत्ता की। बस एक ही आकांक्षा है– कर्सी की ओर इस पद लिप्सा ने इन्हें बेईमान बना दिया है। ये नेता परस्पर विश्वास खो चुके हैं। कोई कब विपक्ष से गठजोड़ कर ले, किसी का कोई पता नहीं। सत्ता की दौड़ में लगातार आगे बढ़ते रहना इनकी विशेषता है। इन्होंने राजनीति को दूषित तो किया ही है। देश की दशा भी बिगाड़ दी है। व्यक्तिगत स्वार्थों ने राष्ट्र हित को संकट में डाल दिया है। सत्ता हथियाने के लिए अपनी जेब भरने के लिए ये राजनेता देश का भी सौदा कर लेते हैं। राजनीति इन नेताओं का पेशा बन गई है। इस पेशे में जनता का शोषण, झूठेआश्वासन, नारेबाजी, घटिया हथकंडे, सफेद झूठ बोलना, जनता को मूर्ख बनाना, ईमानदारी की आड़ में बेईमानी करना इन राजनेताओं का काम हो गया है। ये नेता समाज कल्याण की और देश की दोहाई देते हैं, जबकि इनका वास्तविक उद्देष्य अपनी जेबें भरना है।

ह्यदयेश की कहानी 'दिल्ली में दो बैल' के सांसद वर्मा सही अर्थों में जननेता हैं वह लोगों की बातों को सुनते हैं और उन्हें न्याय दिलवाने का प्रयास करते हैं। सत्ता या पुलिस से जुड़े कर्मचारियों की यदि कोई गलती नहीं है तो वह उन्हें अन्यथा परेशान नहीं करते। कहानीकार सांसद रामरतन वर्मा के बारे में लिखता है कि,'' रामरतन वर्मा एक तो वैसे ही जन प्रतिनिधियों के लिए जरूरी इस सीख की फरियादी के प्रति सहानुभूति दिखाओं और वाणी में मिठास रखो पर चलने वालों में से थे दूसरे चुनाव निकट आ रहे थे इसलिए वह उन दोनों के प्रति कुछ और भी उदार हो गए थे। यों उनहें पुलिस वालों का उनको बैल कहना सही लग रहा था।'' [7]

प्रजातांत्रिक प्रणाली में राजनेताओं का बड़ा बोलबाला है। 'खड्डी' कहानी में ह्यदयेश लिखते हैं– ठाकुर रामशरण सिंह के बारे में मशहूर था कि अपनी पार्टी में उनका प्रभाव है। बावजूद इसके कि गठिया से बुरी तरह ग्रस्त होने के कारण वह पार्टी की बैठकों और विधानसभा में दूसरा का सहारा लेकर शामिल होते थे, वह पार्टी के लिए जरूरी माने जाते थे उनमें सांगठनिक योग्यता अद्भुत थी। उस पर वह एक कुशल वक्त थे। एक बार उनके एक विरोधी ने कहा था कि जब ठाकुर साहब चल नहीं सकते तब अपने क्षेत्र को आगे कैसे चलाएंगे। उन्होंने जावब दिया था कि शक्ति पैरों में न रहकर मस्तिष्क में रहती है या फिर आत्मा में, लेकिन मूर्ख इसको नहीं जानते हैं। [8]

अवसरवादी

नमिता सिंह की कहानी 'राजा का चौंक' राजनीति की अवसरवादिता की सजीव प्रमाण है। इस कहानी का कलुआ शहर आकर दुर्गासरण के पास नौकरी पाने से पहले चौंक पर एक धमाका करता है। बचुआ से उसकी नोंक–झोंक होती है। फिर होटल बनाने का काम शुरू होता है। होटल का उद्घाटन मंत्री करने वाला है। यहांफजल का छोटा बच्चे हथगोला लेकर आता है। वह जैसे ही गोला फैंकता है तो फजल का बड़का दूसरी ओर से चाकू फैंकता है। इस घटना में दोनों भाई मारे जाते हैं। मंत्री दुर्गासरण इस सांप्रदायिकता का रंग देते हुए कहते हैं, अच्छा? मुसलमान था यह। पूरी तैयारी थी बदमाश की–चाकू भी, हथगोले भी। हे! भगवान! यह तो पूरा होटल उड़ा देता। वे पुलिस को इस सांप्रदायिक दंगे की सूचना देते हैं। अंत में सोचते हैं, अच्छा हुआ बच्चू लाल ने रास्ता साफ कर दिया। अब आगे आसानी होगी।'' [9] इस प्रकार व बचपन के दो मित्रों को आपस में मरवाकर अपना पूंजीवादी भूमिका भी संवार लेते हैं।

आज का राजनैतिक नेता अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए किसी को भी बलि का बकरा बना लेते हैं। सामाजिक संबंध, प्रेम और सहानुभूति का उनके लिए कोई अर्थ नहीं। उनका व्यवहार सामाजिक बंधनों को कोई महत्व नहीं देता। समाज जाए या भाड़ में जाए उनकी बला से। उन्हें तो हर तरह से अच्छे या बुरे ढंग से अपने स्वार्थों की सिद्धि करनी है। जातीय दंगे भड़काना समाज में विशैला वातावरण उत्पन्न करना। भाई को भाई से लड़ाना, धर्म के नाम पर बलवा करवाना जाति के नाम पर एक जाति को दूसरी जाति से भिड़वाना, साप्रंदायिक झगड़े करवाना, यह राजनीतिज्ञों का रोज का कर्म हो गया है। श्री जयप्रकाश नारायण का मानना है कि, '' सांप्रदायिकता का अंत सिर्फ सरकार को ही नहीं करना हैं जनता का भी इसमें कर्त्तव्य है और यथार्थ बात तो चयह है कि जनता ही इसे मिटा सकती हैं। समाज के प्रत्येक नागरिक का यह धर्म होना चाहिए कि जहां भी सांप्रदायिकता देखी उसका सर कुचल दीजिए।'' [10] इसमें कोई संदेह नहीं कि कुछ राजनीतिक नेता अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए सांप्रदायिकता को प्रश्रय देते हैं, लेकिन आज तो हिंदू और मुसलमान सर्वहारा वर्ग हैं। वह सांप्रदायिकता के आधार पर प्रतिनिधित्व को स्वीकार नहीं करता। [11] उसे रोटी–रोजी और आजीविका की ज्यादा चिंता है।

राजनीति में पांव रखने के बाद आदमी अवसरवादी हो जाता है उसे केवल अपना ही स्वार्थ नजर आता है, लेकिन आज का मतदाता राजनेताओं की अवसरवादिता को अच्छी तरह से समझ गया है। यह बात कलचंद वर्मा का पात्र बाजाराम उनकी कहानी 'भंवरजाल' में कहता है– '' राजनीति में जाने के बाद आदमी कितने जल्दी और कैसे–कैसे रंग बदलता है, यह मैंने रसिकलाल को देखकर जाना। पहले लोगों से सीधे मुंह बात नहीं करता था। अब फिर चुनाव सिर पर हैं तो उनसे आशीर्वाद मांगता है। चाहता है फिर उसे वोट दो और चुनाव में जीता दो।

मनीराम बोला, ''.....और जीत जाने के बाद उसके तेवर फिर बदल जाएंगे। लोगों से सीधे मुंह बात नहीं करेगा। लोगों के काम नहीं करेगा। दादा, अब ऐसे अवसरवादियों को जनता समझ गई है। अ बवह उनके झांसे में नहीं आएगी। अब वह सचमुच ही योग्य व्यक्तियों का चुनाव करेगी। [12]

राजनेता बहुत अवसरवादी होता है। वह समय के अनुकूल रंग बदल लेता है। चुनाव में खड़े राजनेता एक–दूसरे से मदद लेते हैं और अपने प्रबल प्रतिद्वंद्वी को किसी न किसी तरह खुश करने और चुनाव में खड़ा न होने के लिए तरह–तरह के ढंग अपनाते

हैं। भवंरजाल कहानी में– ''मनीराम ने तम्बाकू मसलते हुए कहा, ''चौधरी जी, लगता है, तुम्हारे खड़े होने की बात से रसिकलाल को चिंता होने लगी है। इसलिए एक दिन तुमसे मिलने आया था। चाहता था कि तुम उसे चुनाव जीतने का आशीर्वाद दे दो। कितना धूर्त और चालाक आदमी है। यदि तुम उसे जीत का आशीर्वाद दे देते तो इसका मतलब यह होता कि तुम उसके खिलाफ खड़े नहीं हो रहे हो।'' [13]

''हां, यह बात तो हैं वाजाराम ने हंसकर कहा। उसे पैर छूते और आशीर्वाद मांगते देख, मैं समझ गया था कि वह चाहता है कि मैं उसके खिलाफ खड़ा न होऊं।''

हरिराम बोला, 'पर दादा, तुम्हारी चतुाई की दाद देता हूं। तुमने उसे विजयी भव का आशीर्वाद न देकर सिर्फ 'खुश रहो' का आशीर्वाद दिया। यदि उसे विजयी भव का आशीर्वाद दे देते तो इसका अर्थ होता कि तुम अपनी हार स्वीकार कर रहे हो.....और तुम अपने मुंह से अपनी हार कैसे सवीकार कर सकते हो?'' उसकी बात पर सभी लोग मुस्करा उठे।'' [14] स्पष्ट है कि राजनेताओं का आचरण समय व अवसर के अनुकूल बदल जाता है।

निष्कर्ष

राजनीतिक प्रदूषण भारतीय जीवन में रिश्वतखोरी भ्रष्टाचार भाई–भतीजावाद, राष्ट्रीय नैतिकता के अवमूल्यन तथा प्रजातंत्रीयशासन तंत्र के संक्रात जीवन का प्रभाव एवं नेताओं के दुराचरण की छाया नवें दशक की कहानियों में दिखाई देती है। नरेश मेहता की 'एक समर्पित महिला' विश्वेश्वर की 'दूसरी गुलामी' मेहरुन्निसा परवेज की 'बंटवारे की फीस' मणि मधुकर की 'अपने रणक्षेत्र' श्रवण कुमार की 'अपने परिवार के लोग' में इन स्थितियों को रेखांकित किया गया है। शराब, रिश्वत और लड़की आज के राजनीतिकों का एक आम चारित्रिक मुहावरा है। इस राजनीतिक कुत्सा को जीवन सिंह की 'जीपों वाला घर' अनिल श्रीवास्तव की 'घरानेदार लड़कियां' [15] प्रामाणिकता से सामने लाती हैं।

सन्दर्भ

1. रामचंद्र वर्मा, शब्दार्थ दर्शन, पृ0 503
2. प्रो. एस. के. जैन, प्रो. के.के. आनंद, संसार की प्रमुख शासन प्रणालियां, पृ0 23
3. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह, नागरिक शास्त्र एवं भारतीय संविधान, ज्ञानदा प्रकाशन, पृ0 184.185
4. वही, पृ0 184.185
5. मैत्रेयी पुष्पा बहेलिए (चिह्नार) पृ0 41.42
6. सुधा गोयल, चुनाव (वनवासिनी), पृ0 10
7. डॉ. सरिता वाशिष्ठ, युग बोध और हिंदी नाटक, पृ0 174
8. ह्यदयेश, खड्डी (सन् उन्नसी सौ बीस), पृ0 62
9. नमिता सिंह, राजा का चौंक (राजा का चौंक), पृ0 78
10. डॉ. रघुवंश, जयप्रकाश नारायण के विचार, पृ0 302
11. जयप्रकाश नारायण, संघर्श की ओर (अनु. मंगलदेव शर्मा) पृ0 149
12. कमलचंद वर्मा, भंवरलाल, (बेदखल) पृ0 43
13. हरीश पाठक, तिर्यक, (गुम होता आदमी) पृ0 23
14. कमलचंद वर्मा, भंवरलाल (बेदखल), पृ0 42.43
15. अनिल श्रीवास्तव, घरानेदार लड़थ्कयां, सारिका फरवरी 1986 पृ0 47